लम्बे अन्तराल के बाद स्कूलों का खुलना, चुनौतियाँ और आगे की दिशा

पाठशाला संवाद शृंखला की यह दसवीं परिचर्चा है। संवाद का विषय है 'लम्बे अन्तराल के बाद स्कूलों का खुलना, चुनौतियाँ और आगे की दिशा।' इस संवाद में सरोजनी रावत, नरेंद्रनगर, खारसोत विद्यालय, टिहरी गढवाल; मीनाक्षी, शिक्षक राजकीय प्राथमिक विद्यालय महाराया रुद्रपुर, उत्तराखंड; सरिता, प्राथमिक विद्यालय सद्दू, रायपुर छत्तीसगढ़; ममता, शासकीय प्राथमिक विद्यालय, धर्मनगर रायपुर; जगमोहन सिंह कठैत, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, श्रीनगर, उत्तराखंड; सुनील शाह, अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन, रायपुर और रजनी द्विवेदी ने अपने विचार साझा किए हैं। सं.

जगमोहन : आज के वेबिनार का सन्दर्भ एक लम्बे अन्तराल के बाद स्कूलों का खुलना, चुनौतियाँ और आगे की दिशा है। स्कूलों के बन्द रहने से बच्चों का लर्निंग लॉस तो हुआ ही है साथ ही बच्चों पर मनोवैज्ञानिक असर भी हुआ है जिससे उनके व्यक्तित्व पर बुरा प्रभाव पड़ा है। वहीं कुछ लोगों का मानना है कि लर्निंग लॉस तो हुआ है लेकिन कुछ अच्छे असर भी हुए हैं, जैसे– बच्चे बहुत मस्त रहे, कोई डर-भय नहीं रहा, और यह भी कि जो बच्चे ऑनलाइन पढ़ाई करते रहे उन्हें सीखने में कोई नुक़सान नहीं हुआ है। इसमें गाँवों और शहरों की स्थितियों में भी फ़र्क़ रहा।

आज की चर्चा का एक मक़सद स्कूल खुलने के बाद शिक्षकों के अनुभवों को सुनना और इस ज़मीनी हक़ीक़त को समझना है कि लर्निंग लॉस किस-किस क्षेत्र में हुआ है एवं उसके मायने क्या हैं। और विद्यालयों में होने वाली छुट्टियों के बाद जब बच्चे वापस आते हैं, और इस बार जो लम्बे समय के बाद वापस आए हैं, इन दोनों अन्तरालों में क्या फ़र्क़ है? तीसरा मुख्य मक़सद यह समझना है कि इस दौरान हुए लर्निंग लॉस को पाटने के लिए क्या किया जा सकता है? पहला सवाल आमंत्रित सभी शिक्षिकाओं से है– बच्चे लगभग दो साल से विद्यालय नहीं आ रहे थे और अब विद्यालय खुले हैं। आप बच्चों से मिलीं तो स्कूल में, कक्षा में उनसे मिलने, सीखने-सिखाने के आपके क्या अनुभव रहे? बच्चों की और आपकी क्या चुनौतियाँ रहीं? पहले मैं सरोजनी को आमंत्रित करता हूँ।

सरोजनी : नमस्ते। बच्चे जब विद्यालय आए तो उनके चेहरे पर चमक थी, उमंग थी। स्कूल बन्द रहने के दौरान बच्चे फ़ोन पर पूछते थे कि मैडम स्कूल कब खुलेंगे, हमें स्कूल की बहुत याद आती है। जब उनको ऑनलाइन काम देते या बात करते थे तब भी वे बताते कि वे बेसब्री से स्कूल खुलने का इन्तज़ार कर रहे हैं। बच्चों के मन में उत्साह था, यह निश्चित रूप से कह सकती हूँ। चुनौतियों की बात करूँ तो स्कूल के कुछ नियम-क़ायदे होते हैं, व्यवस्था व अनुशासन होता है, कक्षा व्यवस्था बनाए रखना, समय पर आना, स्वच्छ रहना, आदि बच्चे भूल गए थे। मसलन, पहले दिन की बात है। जब बच्चे आए, मैं कक्षा 5 में थी। उनमें से एक बच्चे को देखा कि उसकी शर्ट के ऊपर के दो-तीन

बटन खुले हुए थे। कई बच्चों का बोलने का तरीक़ा बदल गया था, जब बोल रहे थे तो लग रहा था कि शालीनता बच्चों की भाषा से निकल चुकी थी और उनके बाल भी बहुत बढ़े हुए थे।

इस दौरान बच्चे इन कामों में भी लगे रहे। वैसे बच्चे पहले भी ऐसा करते थे लेकिन विद्यालय आने की नियमितता और इन सन्दर्भों में संवाद होते रहने से वे समझते थे कि विद्यालय कैसे आना है, बातचीत का तरीक़ा कैसा होना चाहिए, इस लम्बे अन्तराल में यह नहीं हो पाया। हमने पाया कि सुबह की सभा, प्रार्थना कैसे होनी चाहिए, क्या प्रार्थनाएँ थीं, यह सब भी बच्चे भूल चुके थे।

एक सकारात्मक पक्ष यह था कि बच्चे अपने-आप को अभिव्यक्त करने लगे थे। मेरे सवाल पर, कि कोविड के दौरान घर में क्या

चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

परिस्थितियाँ थीं, क्या कोई परेशानियाँ आईं, किन लोगों ने मदद की, सभी बच्चों ने अपने अनुभव सुनाए। उन्होंने बताया कि बहुत सारी स्वयंसेवी संस्थाओं से मदद मिली, जिनके सदस्य हमारे घर खाना देने आते थे। कुछ बच्चों ने बताया कि हमारे काम छूट गए, तो कुछ ने कहा कि हम अपने अभिभावकों के साथ काम पर जाने लगे।

लेकिन लर्निंग लॉस हुआ है। इन डेढ़ सालों में उनके साथ लिखने का अभ्यास बिलकुल नहीं हुआ और इस वजह से उन्हें लिखने में बहुत परेशानी हुई। यहाँ तक कि श्यामपट्ट से देखकर लिखने में भी बच्चे बहुत वक़्त लगाने लगे। पहले वे जो पाँच या दस मिनट में देखकर लिख लेते थे, उसी को लिखने में उन्हें अब आधा घण्टा चाहिए था। तिस पर अक्षरों, शब्दों की बनावट बिलकुल बिगड़ चुकी थी, लिखने में जगह की समझ भी नहीं रही थी। जैसे– मैंने ब्लैकबोर्ड पर एक पंक्ति लिखी, उसी वाक्य के बाक़ी हिस्से को आगे लिखने के लिए पंक्ति में जगह नहीं बची तो उसे अगली पंक्ति में लिखा। बच्चों ने अपनी कॉपी में उसे वैसे ही लिखा, भले ही उनकी कॉपी की पंक्ति में आगे लिखने की जगह हो।

दूसरा, जो बच्चे लॉकडाउन से पहले कक्षा 3 में थे, वे अब कक्षा 5 में आ गए। कक्षा 5 का भी आधा सत्र निकल चुका था क्योंकि स्कूल सितम्बर से शुरू हुए। कक्षा 3 और कक्षा 5 के गणित, भाषा और पर्यावरण में काफ़ी फ़र्क़ होता है। कक्षा 3 में बच्चा पढ़ने-लिखने की समझ विकसित कर रहा होता है। कक्षा 3 व 4 में इसपर कुछ ख़ास काम नहीं हो पाया, इसलिए न तो बुनियाद ढंग से बन पाई, न ही उसकी मज़बूती पर काम हुआ।

कहने का तात्पर्य यह है कि अभिव्यक्ति तो आई, लेकिन लिखित अभिव्यक्ति नहीं आ पाई।

बच्चे अब कुछ अनियमित भी हो गए हैं क्योंकि कोविड के दौरान उन्होंने माता-पिता के साथ काम करना शुरू कर दिया है। माता-पिता की बच्चों से अपने कामों में मदद लेने की आदत बन गई है। पहले प्राथमिक कक्षाओं के बच्चे काफ़ी नियमित थे, अभिभावक बच्चों को किसी मज़दूरी के काम में नहीं लगाते थे, लेकिन कोविड में जब मजबूरी में बच्चों को लगाया और पाया कि बच्चे अच्छे से सँभाल पा रहे हैं तो स्कूल खुलने के बाद भी वे उन्हें अपने साथ ले जाने लगे।

जगमोहन : धन्यवाद, सरोजनी। सरिता, आप अपनी बात रखें।

सरिता : नमस्कार। हमारा स्कूल 2 अगस्त, 2021 से खुला। कुल 125 बच्चे थे और 50 फ़ीसदी बच्चों को ही बुलाना था। सबसे पहली चुनौती थी, कोरोना गाइडलाइन का पालन करना। स्वच्छता के बारे में तो वे जागरूक थे, अतः बार-बार हाथ धोना, इधर-उधर न छूना, ये सब अच्छे से करते थे। लेकिन भौतिक दूरी बनाए रखना एक बड़ी चुनौती थी। बच्चे साथ-साथ बैठ जाते थे। मास्क लगाने के लिए भी बार-बार बोलना पड़ता था। मैं कक्षा 2 को पढ़ाती हूँ। हमारा स्कूल 12 मार्च, 2020 से बन्द हुआ, उस वक़्त हम कक्षा दूसरी में पढ़ना-लिखना सीख ही रहे थे। कुछ समय बाद हमने बच्चों से ऑनलाइन जुड़ने का प्रयास किया, व्हाट्सएप समूह भी बनाया। इस बीच मध्याह्न भोजन का राशन देने जाते और मैं पालकों से बात करती थी कि बच्चे ऑनलाइन कैसे जुड़ सकते हैं, उन्हें क्या एप डाउनलोड करने होंगे। लेकिन वे नाराज़ होते थे कि पहले ही इतनी परेशानियाँ हैं और फिर कई वजहों से स्मार्टफ़ोन बच्चों को देने की बात भी उनको बिलकुल पसन्द नहीं आती थी। ख़ैर, ऑनलाइन कक्षाएँ हुईं लेकिन उनका कुछ ख़ास फ़ायदा बच्चों को नहीं मिल पाया। ऑफ़लाइन कक्षा का कोई और विकल्प हो ही नहीं सकता था। जब बच्चे वर्ष 2021 में स्कूल आए तो वे कक्षा 4 में थे लेकिन उनका शैक्षिक स्तर दूसरी का ही लग रहा था, और कई तो उससे भी पीछे थे। मेरे पास स्कूल में 125 बच्चे थे उनमें से 27-28 बच्चों के पालकों से मैं सम्पर्क ही नहीं कर पाई। सम्भवतया वो पलायन कर गए थे। 25-26 बच्चे बिलकुल शुरुआती स्तर के थे। जो कुछ भी वो सीखे थे, भूल चुके थे। कुछ 36-37 बच्चे ऐसे थे जिनको कुछ आता था, मतलब कम प्रयास से ही वो सीखने लग गए थे।

स्कूल जब दोबारा शुरू हुए तो बच्चों को लगा जैसे कोई त्योहार है। बच्चे ख़ुशी-ख़ुशी आने को तैयार थे। लेकिन तब भी कुछ अभिभावक ऐसे थे जो बीमारी के डर के चलते बच्चों को स्कूल नहीं भेजना चाहते थे। मैंने उनसे कहा कि हम ध्यान रखेंगे स्कूल में बच्चे सुरक्षित रहें, मोबाइल की तुलना में स्कूल में सीखना-सिखाना बेहतर होता है।

जगमोहन : धन्यवाद, मैं ममता से अपने अनुभव साझा करने का आग्रह करूँगा।

ममता : स्कूल जब दोबारा शुरू हुए तो बच्चों को लगा जैसे कोई त्योहार है। बच्चे ख़ुशी-ख़ुशी आने को तैयार थे। लेकिन तब भी कुछ अभिभावक ऐसे थे जो बीमारी के डर के चलते बच्चों को स्कूल नहीं भेजना चाहते थे। मैंने उनसे कहा कि हम ध्यान रखेंगे स्कूल में बच्चे सुरक्षित रहें, मोबाइल की तुलना में स्कूल में सीखना-सिखाना बेहतर होता है। मेरे यहाँ मैं अकेली ही शिक्षिका हूँ, हालाँकि बच्चे कम हैं और स्कूल भी छोटा ही है। अधिकांश अभिभावक दिहाड़ी मज़दूरी करते हैं, माताएँ घरों में बर्तन, झाड़ू-पोंछा करने जाती हैं, और बच्चे घर में अकेले रहते हैं। ज़्यादातर बच्चों के अभिभावक पढ़े-लिखे नहीं थे, इसलिए बच्चे घर में भी कुछ नहीं कर पाते थे। इस वजह से भी बच्चों का स्कूल आना ज़रूरी था, और अभिभावकों से काफ़ी बातचीत कर मैं बच्चों को स्कूल लेकर आई।

मैंने भी पाया कि बच्चे काफ़ी कुछ भूल चुके थे। स्कूल बन्द हुए तब ये पहली कक्षा में थे

और अब तीसरी में आने वाले थे। तीसरी कक्षा के स्तर पर उनको लाना तो मुश्किल था ही, पर कक्षाओं के लिए लगातार बैठा पाना भी बड़ा मुश्किल हो रहा था। मेरे लिए यह चुनौती थी कि वो मेरी बात सुनें और पढ़ना-लिखना शुरू करें। ये बच्चे सिर्फ़ पहली पढ़कर तीसरी में आए थे। चौथी और पाँचवीं के बच्चे ज़्यादा नहीं भूले थे, तीसरी में वो काफ़ी सीख चुके थे। जितना भी वो भूले थे थोड़ा-बहुत उस बारे में बात करने पर फिर से उनको याद आ गया। मैंने बच्चों की ऐसी जोड़ियाँ बनाईं जिनमें एक कमज़ोर और एक बच्चा वह होता जिसे पढ़ना और समझना आता था। जोड़ी बनाकर एक दूसरे की मदद करने के लिए कहा और बच्चे ही अपने साथी को सिखाते थे। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन की मदद लेते हुए इन बच्चों के लिए स्तरानुसार मैंने कई वर्कशीट भी बनाईं, जिनसे मुझे बच्चों के साथ काम करने में और बच्चों को सीखने में काफ़ी मदद मिली। बच्चों ने इन वर्कशीट को बहुत ख़ुशी-ख़ुशी स्वीकार किया और उनसे सीखने लगे। अब मेरे बच्चे अच्छी तरह पढ़ाई कर रहे हैं। लेकिन अब भी मुझे पहली और दूसरी कक्षा में बहुत समस्या हो रही है, क्योंकि मैं अकेली शिक्षिका हूँ। मैंने समुदाय और अड़ोस-पड़ोस के मोहल्ले वालों से निवेदन किया कि यदि कोई स्वेच्छा से मेरी शाला में मेरी मदद करना चाहता है तो आ सकता है। एक लड़की जो बीएड है और अभी एमए की पढ़ाई कर रही है, वह मेरी मदद कर रही है।

चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

इस दौरान फ़ोन द्वारा बच्चों से मेरा जुड़ाव लगातार बना रहा। जिन बच्चों के अभिभावक जागरूक थे, जो बच्चे ख़ुद कुछ पढ़ाई कर सकते थे, वे कुछ मदद फ़ोन से ले लेते थे। कभी-कभी उनको मैं कोई दिन देती थी कि मैं इस दिन इतने बजे स्कूल में रहूँगी, कोई परेशानी हो तो अकेले अथवा पापा या मम्मी के साथ आना, मैं समझा दूँगी। मैं अकसर उन्हें पेरेंट्स के साथ बुलाती थी। लॉकडाउन के दौरान सबको तो नहीं बुला सकती थी। पर मैं स्वयं अपने साधन से जाती और अपनी ही रिस्क पर बच्चों को बुलाकर उन्हें सिखाती और इतना होमवर्क देती कि बच्चा उसको समझ सके और कर सके। पेरेंट्स को भी कहती कि अगर आपको कोई प्रॉब्लम होती है या नहीं समझ आता तो मुझे फ़ोन करिए, मैं आपकी सहायता करूँगी।

जगमोहन : शुक्रिया ममता। आप कह रही हैं कि जो बच्चे सम्पर्क में रह पाए, जिनको हम सपोर्ट कर पाए, कहीं-न-कहीं उनकी अकादमिक कनेक्टिविटी बनी रही, जो नहीं रह पाए उनका लॉस अधिक हुआ है। इसी प्रश्न पर अब हम मीनाक्षी के अनुभव सुनते हैं।

मीनाक्षी : हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती थी कि स्कूल में कोरोना गाइडलाइन का पालन भी करना है, और यह सब बच्चों को सिखाना भी है। शुरुआत में हम बच्चों को ज़्यादा लम्बे समय तक स्कूल में नहीं रोक पाए। सुबह की सभा नहीं थी, कक्षा में भी दूरी रखते हुए काम करना था, यह सब मुश्किल था। शुरुआत में छोटे बच्चों से बातचीत की तो पाया कि कक्षा एक, दो, तीन के बच्चे कही गई बात को भी नहीं समझ पा रहे थे। हालाँकि कक्षा चार और पाँच के बच्चों में उत्सुकता थी कि अब हम स्कूल में

आ गए हैं। वे बहुत सारी चीज़ें करना चाहते थे, मसलन, मिलकर प्रार्थना करना, कहानी सुनना, खेलकूद, श्यामपट्ट पर लिखना, आदि। कहानी सुनाना स्कूल की दैनिक गतिविधि है और वो बच्चों को बहुत पसन्द है।

मोबाइल फ़ोन से जुड़ाव तो बच्चों के साथ नहीं हो पाया, लेकिन जब हम बच्चों को मिड-डे मील देने के लिए जाते थे उस समय वर्कशीट वितरण भी करते थे, इससे हमारा जुड़ाव बना रहा। दूसरा मैंने बाल पुस्तकालय की किताबें बच्चों को देना शुरू किया। मन में यह सवाल तो आया कि बच्चे किताबें ले तो जा रहे हैं पर पढ़ेंगे कैसे! लेकिन उनके बड़े भाई-बहिन जो पढ़े-लिखे थे, उन्होंने मदद की और मेरे चौथी व पाँचवीं के बच्चे जो पढ़ सकते थे, पढ़ना पसन्द करते हैं उन्होंने पढ़ने-लिखने का काम जारी रखा। इन बच्चों का तो ज़्यादा नुक़सान नहीं हुआ लेकिन कक्षा तीन में जो बच्चे आए, उनके साथ काम करना मुश्किल था। उनके साथ योजना के अनुसार काम किया है। उसपर आगे बात करेंगे। बच्चे काफ़ी कुछ भूल चुके हैं। फिर भी बच्चे निश्चित रूप से स्कूल आना चाह रहे थे, बहुत कुछ सीखना चाह रहे थे। लेकिन चैलेंज यह था कि अब उनको ज़्यादा समय तक कक्षा में कैसे रोकें और कैसे व कहाँ से उनके साथ काम की शुरुआत करें।

जगमोहन : शुक्रिया। बच्चे बहुत उत्सुक हैं, लेकिन अलग-अलग प्रकार की चुनौतियाँ हैं। कई जगह दिख रहा है, बच्चे स्कूल की संस्कृति से काफ़ी दूर हो गए हैं, उन्हें उस कल्चर में वापस कैसे रँगेंगे?

मैं सुनीलजी को आमंत्रित करूँगा। उनसे सवाल है कि लर्निंग लॉस व लर्निंग गैप पहले भी होता था, पर अभी जो लर्निंग लॉस व गैप की बात हो रही है वो किस मायने में भिन्न है?

सुनील : इस लॉस को हम कई तरीक़े से समझ सकते हैं। लर्निंग लॉस व लर्निंग गैप पहले भी था लेकिन उसमें और अभी जो हुआ है इन दोनों में काफ़ी भिन्नता है। पहले जो लर्निंग लॉस होता था, वो विद्यालय में कुछ बच्चों का कुछ समय के लिए अनुपस्थित रहना, किसी विषय-वस्तु पर समझ नहीं बन पाना, उसमें पीछे रह जाना, इस तरह का था। पहले इस तरह के उदाहरण मिलते थे। लेकिन अभी का रेंज काफ़ी व्यापक है। अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन द्वारा किया गया अध्ययन दर्शाता है कि महामारी की वजह से बच्चों का लगभग 80 से 90 प्रतिशत लर्निंग लॉस हुआ है। हमारे ख़ुद के विद्यालय अवलोकन भी दर्शाते हैं कि जो बच्चे कक्षा दो या तीन में थे अभी वो कक्षा पाँच में आए हैं, लेकिन लिखने-पढ़ने की जो उनकी क्षमता थी उस क्षमता से वे काफ़ी पीछे चले गए हैं।

अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन द्वारा किया गया अध्ययन दर्शाता है कि महामारी की वजह से बच्चों का लगभग 80 से 90 प्रतिशत लर्निंग लॉस हुआ है। हमारे ख़ुद के विद्यालय अवलोकन भी दर्शाते हैं कि जो बच्चे कक्षा दो या तीन में थे अभी वो कक्षा पाँच में आए हैं, लेकिन लिखने-पढ़ने की जो उनकी क्षमता थी उस क्षमता से वे काफ़ी पीछे चले गए हैं।

इसको ऐसे भी समझ सकते हैं। अगर विद्यालय खुले होते और सबकुछ ठीक चल रहा होता तो पिछले डेढ़-दो साल माने लगभग 450-500 दिनों में जितनी पढ़ाई हो पाती, वह नहीं हो पाई। इस नुक़सान का दूसरा आयाम

है कि इन दिनों बच्चों का अन्य बच्चों के साथ जुड़ाव और सीखने-सिखाने की प्रक्रिया भी बाधित रही। सारांश में, जहाँ पहले पाँच-दस प्रतिशत बच्चे किसी कारण से सीख नहीं पाते थे अब यह दायरा बढ़कर 80-90 प्रतिशत तक आ गया है।

जगमोहन : धन्यवाद सुनीलजी। इस लर्निंग लॉस या गैप को पाटने के लिए बहुत सारे प्रयास किए गए हैं, मैं चाहूँगा आप सभी ने जो प्रयास किए उनके बारे में बताएँ। मैं आमंत्रित करता हूँ सरोजनी मैम को।

सरोजनी : मैं लर्निंग लॉस को दो तरह से देखती हूँ– एक तो विद्यालय परिसर में क़दम रखते ही मुझे ऐसी चीज़ें दिखती हैं जो बच्चे के अन्दर होनी चाहिए और नहीं हैं, तो उसे भी लॉस ही कहूँगी। मसलन, कक्षा में लगातार न बैठ पाना। विषयों की बात करें तो प्राथमिक स्तर पर सारे विषय देखने होंगे। मैंने हिन्दी, गणित और अँग्रेज़ी तीनों विषयों पर बच्चों के साथ काम किया। अभी पिछले छ: महीनों से मैं कक्षा पाँच को हिन्दी पढ़ा रही हूँ तो इसी के उदाहरण दूँगी। मैंने पाया कि बच्चे बहुत अच्छी अभिव्यक्ति कर पा रहे थे, लेकिन उस अभिव्यक्ति को लिखित रूप देना बच्चों के लिए सम्भव नहीं था। मात्राओं की गड़बड़ी थी और पढ़ने की गति कम हो गई थी। जब बच्चों ने स्कूल आना शुरू किया तो उन्हें कार्य पुस्तिकाएँ हल करने को दी गईं। मैंने हर एक बच्चे की कार्य पुस्तिका का विषयवार अध्ययन किया। अध्ययन करने के बाद मैंने हर बच्चे की अभ्यास पुस्तिका के पीछे एक सूची बना ली। बच्चा किन अवधारणाओं को भूल गया है, उनमें कहाँ कमी है, किन अवधारणाओं को और किस हद तक वो समझ पा रहा है, आदि बिन्दु मैंने इस सूची में लिखे। हर बच्चे के लिए यह सूची बनाने के बाद मैंने इन बिन्दुओं को संक्षेपित किया और उनके आधार पर समझ पाई कि बच्चे निर्देशों को समझ रहे हैं, अपनी बात को अभिव्यक्त कर रहे हैं लेकिन लय के साथ न तो पढ़ पा रहे हैं न ही शुद्ध रूप से लिख पा रहे हैं। मैंने यह ज़रूरी कर दिया कि कक्षा में हर बच्चे को एक अनुच्छेद पढ़ना ही है। दूसरा काम था, रोज़ एक अनुच्छेद घर से लिखकर लाना और अगले दिन उसे कक्षा में पढ़कर सुनाना। मेरा मानना था कि इससे बच्चों का लेखन कौशल सुधरेगा और बच्चे समझकर लिखना व पढ़ना सीखेंगे। यह काम ख़ासतौर से उन बच्चों के लिए था जो बच्चे कुछ पढ़ पा रहे थे, मात्राएँ पहचान पा रहे थे लेकिन धाराप्रवाह नहीं पढ़ पा रहे थे। कुछ ऐसे थे जिनको मात्राओं की भी समझ नहीं थी। ऐसे बच्चों को पहले हफ़्ते सारी मात्राओं का दोहरान करवाया, इस काम को किताब से जोड़ने के लिए मैंने पाठ में से 'ई' और 'आ' की मात्रा वाले सारे शब्द कॉपी में लिखने जैसे टास्क दिए। मैंने पाया कि महीनेभर बाद बच्चे मात्राओं को पहचानने और पढ़ने लगे, फिर मैंने उनकी पढ़ने की गति पर काम किया। जैसा मैंने उनसे कहा, "रोज़ एक पेज पढ़ना और एक अनुच्छेद लिखकर लाना", यह क्रम मार्च तक जारी रखा।

चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

मैंने संज्ञा, सर्वनाम आदि की परिभाषाएँ करवाने की बजाय दूसरा तरीक़ा अपनाया,

जैसे– अपने आसपास की चीज़ों के नाम लिखो। बच्चों से कहा कि अपने सामने की वस्तु देखो, उससे पूछो कि आपका नाम क्या है। तो यदि अजीवित बोलते तो ब्लैकबोर्ड कह सकता था, "मैं ब्लैकबोर्ड हूँ", "मैं डस्टर हूँ", "मैं चार्ट हूँ", तो जहाँ से भी ऐसा जवाब आ सकता है वो नाम वाले शब्द हैं। इन्हीं नाम वाले शब्दों को हम संज्ञा कहते हैं। ऐसे ही जब शरीर को गति करनी पड़ती है तो वे क्रिया के उदाहरण हैं, मसलन, खेलना, कूदना, हँसना, गाना, आदि। बच्चों को घर से, किताब से भी ऐसे नाम ढूँढ़ने को कहा। जब हमारे पास बहुत-से शब्दों की सूची बन जाती तब हम बात करते थे कि ये संज्ञाएँ हैं और ये क्रियाएँ।

हमारे यहाँ एनसीई आरटी की पाठ्यपुस्तकें हैं। मैंने बच्चों के साथ सभी पाठों का दोहरान किया। पाठ का मौखिक सारांश बच्चों के सामने रखा और उसपर बच्चों से संवाद किया। हर पाठ में दी गई मुख्य जानकारियों, जो बच्चों को देनी हैं, को इकट्ठा किया। जैसे– डाकिए के कहानी वाले पाठ में, पिनकोड क्या होता है, पता लिखना, क्यों लिखते हैं, आदि को इकट्ठा किया। ऐसा मैंने सारे पाठों के लिए किया और सारांश के रूप में जानकारी बच्चों के सामने रखी। गणित में मैंने अंकों की पहचान पर दोबारा काम किया। अधिकांश बच्चों को सैकड़ा या हज़ार तक की समझ थी। लेकिन अठासी या नवासी और इसी तरह की अन्य संख्याओं को देखकर चुप हो जाते हैं। इन सबका दोहरान किया। गुणा, भाग, जोड़, घटाव जैसी संक्रियाओं का भी दोहरान किया। यानी, बार-बार जोड़ने को गुणा कहते हैं। मुख्यतः बुनियादी गणितीय क्षमताओं पर मैंने काम किया।

रजनी : एक सच्चाई यह है कि बच्चे अगली कक्षा में जाएँगे और उन्हें उसके लिए तैयार करना है ही, लेकिन बच्चे भूल भी बहुत कुछ गए हैं और हम उन भूली हुई अवधारणाओं की भी पुख़्ता समझ बनाना चाहते हैं उसमें समय भी लगाना पड़ेगा, और इसलिए उन्हें पर्याप्त समय देना पड़ेगा। प्रश्न यह है कि बच्चों की किसी अवधारणा की अच्छी समझ बनिस्बत उसको दूसरी कक्षा में ले जाना, इन दोनों बीच में सन्तुलन कैसे करेंगे? मीनाक्षीजी आप से शुरू करते हैं।

सच्चाई यह है कि बच्चे अगली क्लास में जाएँगे और उन्हें उसके लिए तैयार करना है ही, लेकिन बच्चे भूल भी बहुत कुछ गए हैं और हम उन भूली हुई अवधारणाओं की भी पुख़्ता समझ बनाना चाहते हैं उसमें समय भी लगाना पड़ेगा, और अगर हम चाहते हैं कि वे जोड़, गुणा की अवधारणा को ठीक से समझें तो उन्हें पर्याप्त समय देना पड़ेगा।

मीनाक्षी : मुझे अवधारणा पर समझ बनाना ज़्यादा ज़रूरी लगता है। अगर बच्चों की अवधारणा पर पुख़्ता समझ बन जाती है तो निश्चित रूप से आगे वह जो भी सीखेगा वो स्थाई होगा। जैसे– मैंने कक्षा एक, दो में हिन्दी भाषा में बच्चों के साथ अच्छा काम कर लिया है। बच्चे अभिव्यक्त कर पा रहे हैं– लिखित भी और मौखिक भी– उनमें जिज्ञासा है और वे पढ़ना चाह रहे हैं। ये चीज़ें बच्चे में होनी ज़्यादा ज़रूरी हैं। जब ये चीज़ें बच्चे में विकसित हो जाती हैं तो आगे बच्चा जो भी विषय पढ़ना चाह रहा है, चाहे वो गणित हो या इंग्लिश, उसमें उसका रुझान पैदा हो जाता है।

रजनी : सरिता, आप कुछ कहना चाहेंगी?

सरिता : मेरा मानना है कि बच्चा अगर एक से दस तक भी गिनती जान गया तो दस तक की गिनती से ही दो को तीन से जोड़ना,

तीन से दो को घटाना, आदि बच्चा पहली से सीख सकता है। पहली कक्षा से ही छोटी-छोटी संख्याओं से जोड़ना, घटाना, गुणा आदि सीख जाएगा तो आगे बड़ी संख्याओं के साथ ये संक्रिया करने में उसे सहूलियत होगी।

रजनी : रघुवेंद्रजी का सवाल है कि जो बच्चे अभी कक्षा 4 में हैं, वो बच्चे कक्षा 2, कक्षा 3 का भी भूल गए हैं। अब कक्षा 2 और 3 की अवधारणाओं पर बच्चों की समझ बनाने के लिए काम करना है और साथ-साथ कक्षा चार की अवधारणाओं पर भी, ये कैसे होगा?

ममता : पहले भाषा पर ज़्यादा ध्यान देना पड़ेगा। बच्चा अगर भाषा को समझने लगता है

चित्र : पुरुषोत्तम सिंह ठाकुर

तो हम गणित की अवधारणाओं को अच्छी तरह से समझा सकते हैं।

रजनी : धन्यवाद। सुनीलजी, आप इसपर अपने विचार रखें।

सुनील : मेरी समझ से इसका कोई शॉर्टकट नहीं है। जो सुझाव बाक़ी शिक्षक साथियों ने रखे हैं मेरी उनसे सहमति है। अगर बच्चा अभी कक्षा 4 में है और दो साल पहले वो कक्षा 2 के स्तर पर था, तो यह मानकर चलें कि अधिकांश बच्चे कक्षा 2 के स्तर पर ही हैं। इन बच्चों के साथ बुनियादी संख्यात्मक ज्ञान और पढ़ने-लिखने पर फ़ोकस करते हुए काम करना पड़ेगा। साथ में कुछ विषय-वस्तु कक्षा चार की भी ले सकते हैं, लेकिन ये सिर्फ़ भाषा के क्षेत्र में सम्भव है। गणित के सन्दर्भ में यह अप्रोच काम नहीं करेगी। गणित में बुनियादी स्तर से काम करना होगा। तभी आप क्रमिक रूप से कक्षा चार के स्तर की गणित की अवधारणा पर पहुँच सकते हैं।

रजनी : शुक्रिया सुनीलजी। मनोहर का एक सवाल है कि बच्चों ने अगर अवधारणाओं को रटा होगा तो भूल गए होंगे, लेकिन जो अवधारणा समझ ली होगी उसे कैसे भूल गए होंगे?

मीनाक्षी : मैं इस बात से सहमत हूँ। एक उदाहरण देना चाहूँगी। कक्षा 4 और 5 के बच्चों के साथ आरम्भिक भाषा को लेकर अच्छे से काम हुआ था इसलिए बच्चे कविताओं, कहानियों को कुछ हद तक बता पा रहे थे, माने अभिव्यक्त करने की क्षमता थी। वे शब्दों को लिख पा रहे थे। जब मैंने मोहल्ला कक्षाएँ ली थीं, उनमें छोटी-छोटी कविताओं को लेकर योजना बनाई थी। इनमें प्रश्न भी अलग-अलग तरीक़े के होते थे। कुछ प्रश्न क्या, क्यों वाले और कुछ खुली बातचीत के होते थे, साथ ही हर स्तर के बच्चे के लिए प्रश्न होते थे। वर्ण एवं मात्रा की पहचान के लिए भी प्रश्न थे और अगर बच्चे को अभिव्यक्ति का अभ्यास करना है तो उससे सम्बन्धित प्रश्न भी थे। इन कक्षाओं में हमने पढ़ना सिखाने पर भी काम किया। सिर्फ़ पाठ्यपुस्तकों की नहीं बल्कि अन्य कहानियों व कविताओं से भी मदद मिली।

रजनी : सरिताजी, आप कुछ जोड़ना चाहेंगी?

सरिता : बच्चे जो चीज़ अच्छे से समझ चुके थे वो नहीं भूले। थोड़ा-सा उनके पटल पर धूल जमने जैसी बात हुई थी, जैसे– जो बच्चे कक्षा दूसरी में अच्छा लिखने-पढ़ने लगे थे वो चौथी में आने के बाद थोड़े से प्रयास के बाद अच्छे से पढ़ने-लिखने लगे, यह ज़रूर है कि दो-ढाई माह उनके साथ लगकर काम करना पड़ा। बच्चों ने भी एक दूसरे की सीखने में मदद की। फिर मैंने कुछ वर्कशीट भी काम में लीं।

रजनी : सरोजनी जी, आप कुछ जोड़ना चाहती हैं?

सरोजनी : पहले तो हमें यह फ़ोकस करना पड़ेगा कि हम किस लॉस की बात कर रहे हैं। क्या वो पाठ्यक्रम से जुड़ा है या बच्चे ने क्या सीखा और क्या भूल गया, इसकी बात है। माने किताब नहीं पढ़ी यह एक बात है और कोई क्षमता में कमी आई, यह दूसरी बात है। जैसे– कक्षा तीन, चार और पाँच के हिन्दी भाषा के लर्निंग आउटकम को देखें तो पाते हैं कि अमूमन तीनों कक्षाओं के लर्निंग आउटकम एक से हैं। इनमें लगभग 80% समानता है, थोड़ी जो असमानता है वो यह है कि व्याकरण के तत्त्वों की समझ मसलन, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण की अवधारणा कक्षा-दर-कक्षा थोड़ी बढ़ती जा रही थी। लेकिन भाव की अभिव्यक्ति, कहानी, कविता कहना या किसी पात्र के विषय में बात करनी है वो तीनों कक्षाओं में एक जैसा ही है। इंग्लिश में भी लर्निंग आउटकम एक जैसे ही हैं, लेकिन गणित विषय इसमें थोड़ा अलग है। गणित के सम्बोध सरल से कठिन की ओर बढ़ते हैं, इसलिए पहले फ़ाउण्डेशनल न्युमेरेसी पर काम करना पड़ेगा चाहे हम कोई भी कक्षा को पढ़ा रहे हों। हमें बच्चों को अतिरिक्त समय भी देना होगा। यह भी कि किसी एक विषय की कक्षा से समय बचेगा तो उसे गणित जैसे अन्य विषय में लगा सकती हूँ। क्योंकि गणित अवधारणाओं की समझ और अभ्यास दोनों ही माँगता है। गणित कोई प्रश्न-उत्तर जैसा नहीं कि आपने पढ़ा और बच्चे ने जवाब दे दिया। यदि आपने 3 की जगह 4 लिख दिया और 8 की जगह 9 लिख दिया तो बच्चों को लगता है कि ये अलग सवाल है। मैंने बच्चों के साथ संख्याओं की समझ, संख्याओं को शब्दों में लिखना, जोड़-बाक़ी पर एक महीने तक काम किया। एक दिन बच्चों का टेस्ट लिया तो काफ़ी हैरानी हुई, अच्छे-अच्छे बच्चों ने भी संख्याओं को शब्दों में लिखने में ग़लती की थी। मुझे महसूस हुआ कि मैंने बच्चों को समझने और अलग-अलग तरह के अभ्यास के लिए पर्याप्त समय नहीं दिया। एक-दो दिन जोड़ किया, फिर घटाव और तब गुणा, सब काफ़ी जल्दी-जल्दी किया। बच्चे ख़ुद सवाल बनाएँ, एक दूसरे को सवाल करने के लिए दें, ऐसा कुछ नहीं किया। इससे बच्चों को अभ्यास नहीं मिल पाया था, तो फिर उसके बाद मैंने बच्चों को अभ्यास करने के लिए अधिक-से-अधिक प्रश्न देने शुरू किए और अब बेहतर परिणाम आ रहा है।

बच्चे जो चीज़ अच्छे से समझ चुके थे वो नहीं भूले। थोड़ा-सा उनके पटल पर धूल जमने जैसी बात हुई थी, जैसे— जो बच्चे कक्षा दूसरी में अच्छा लिखने-पढ़ने लगे थे वो चौथी में आने के बाद थोड़े से प्रयास के बाद अच्छे से पढ़ने-लिखने लगे, यह ज़रूर है कि दो-ढाई माह उनके साथ लगकर काम करना पड़ा। मैंने एक तरीक़ा अपनाया था। ऐसे समूह बनाए जिनमें एक बच्चा बहुत बढ़िया पढ़ने वाला और उसके साथ एक दूसरी के स्तर का बच्चा होता था। ऐसे बच्चों ने भी एक दूसरे की सीखने में मदद की। फिर मैंने कुछ वर्कशीट भी काम में लीं।

रजनी : धन्यवाद सरोजनीजी। ममताजी, आप कुछ जोड़ना चाहेंगी?

ममता : तीसरी के साथ-साथ चौथी और पाँचवीं के बच्चों को दो महीने तक मैंने एक ही तरह के सवाल हल करना और गणित की संख्याओं को सिखाया, इससे उनमें समझ बनी। जब वो समझने लगे उसके बाद तीसरी के बच्चों को थोड़े आसान, चौथी के बच्चों को थोड़ा अलग और पाँचवीं के बच्चों को उससे अलग सवाल देकर काफ़ी अभ्यास कराया। अभ्यास पर मैं ज़्यादा ध्यान देती और बच्चों को कहती कि ब्लैकबोर्ड पर हल करो। बच्चे एक दूसरे का देखकर भी सीखते हैं, ब्लैकबोर्ड पर वो सवाल

करते तो मुझसे पूछते, मैं सही हूँ या ग़लत, तो मैं अभ्यास कराकर सिखाती और वही सारे प्रश्न मैं उनको होमवर्क में भी देती।

सुनील : अगर अवधारणाएँ समझ ली गई होती हैं तो आसानी से भूली नहीं जा सकतीं। लेकिन इसको इस तरीक़े से समझें कि जो बच्चा कक्षा 2 या 3 में आज से दो या तीन साल पहले था और उस समय कुछ अवधारणाओं के उदाहरण लें, जैसे– गणित में संक्रियाओं पर काम हुआ होगा, भाषा में लिखने-पढ़ने पर काम हुआ होगा और अब ये कक्षा दो या तीन के बच्चे कक्षा चार या पाँच में आ गए। सवाल यह है कि कक्षा 3 और 4 में उनके साथ जो काम होना था, जो समझ बननी थी, लगातार दो साल तक इनपर काम बिलकुल नहीं हुआ तो कक्षा 5 में उनसे ये उम्मीद करना कि कक्षा 3 और 4 की अवधारणा भी वो बताए तो मुझे लगता है, ये बच्चे के साथ नाइंसाफ़ी है। वो कक्षा 2 की अवधारणा को तो बता पाएगा लेकिन कक्षा 3 और 4 की अवधारणा नहीं बता पाएगा, दूसरा मुझे लगता है कि जब बच्चों के साथ लगातार किसी अवधारणा पर काम करते हैं तो उस अवधारणा पर काम करते हुए उनके साथ उन अवधारणाओं को अलग-अलग तरह से समझ बनाने और पुख़्ता करने की तमाम कोशिशें होती हैं जो अवधारणा को और मज़बूती प्रदान करती हैं। इस तरह के अभ्यास करने का समय भी इन दो साल में न शिक्षकों और न ही बच्चों को मिल पाया।

रजनी : दो साल में अपने साथियों के साथ बच्चों की जो अन्तःक्रिया होती गणित की, भाषा और अन्य विषयों की कक्षा में, और अपने शिक्षक व साथियों के साथ उस अन्तःक्रिया के फलस्वरूप उनको किसी एक अवधारणा के बारे में व्यापक रूप से जो समझने को मिलता, वह उन्हें नहीं मिला है। मसलन, तीन एक संख्या है, बच्चा बातचीत में ये सीखें कि तीन चार से एक छोटा होता है, तीन जो पाँच से दो छोटा होता है, या तीन दो से एक बड़ा होता है, या तीन तेरह से दस कम होता है, मतलब उस एक संख्या के बारे में काफ़ी सारी चीज़ें हैं जो सीखनी पड़ती हैं और बच्चे आपस में बातचीत में भी और शिक्षक से भी वह सीखते हैं। इस तरह के संवाद शिक्षकों और बच्चों के साथ कक्षा में हो नहीं पाए, इसलिए अवधारणाएँ जिस तरह से समझनी थीं उसमें कुछ रिक्तता आई ही है।

चित्र : हिमांशु खोले

कुछ सवाल व टिप्पणियाँ पढ़ना चाहूँगी। एक टिप्पणी है कि हम मज़दूर परिवार के बच्चों से ज़्यादा उम्मीद नहीं कर सकते क्योंकि माहौल का भी असर होता है। मज़दूर या वंचित परिवारों के बच्चों की ही बात नहीं है, किसी भी प्रकार के परिवार में इस तरह का माहौल हो सकता है कि कोई बच्चों के साथ अर्थपूर्ण बात करता है और कोई अर्थपूर्ण बात नहीं करता, और उस अर्थपूर्ण माहौल की ग़ैर-मौजूदगी में बच्चे कुछ सीखने से वंचित रह गए हों। ये किसी एक वर्ग की बात नहीं है। लेकिन अलग-अलग स्तर के हिसाब से, अलग-अलग तरह के एक्सपोज़र के हिसाब से बच्चों के सीखने में फ़र्क़ हुआ होगा, कुछ बच्चे सीखे होंगे, कुछ नहीं। जैसा ज़ुबेरजी ने अपनी टिप्पणी में कहा है कि समझ को समझना पड़ेगा कि बच्चे सवाल समझ गए हैं या घटाने और गुणा करने की विधि उनको याद है। जैसे– दो संख्याओं का जोड़ उन्होंने कर लिया पर तीन अंकों की संख्याओं के साथ वो नहीं कर पा रहे हैं, या चार अंकों की संख्याओं के साथ नहीं कर पा रहे हैं, तो क्या समझना रह गया है। ऐसा होता है कि बच्चे 23 और 24 को जोड़कर 47 लिख पा रहे हों, लेकिन अगली बार 25 और 25 जोड़ने के लिए दिया और उसने 410 लिख दिया। अब इसमें ये ही नहीं है कि बच्चे को हासिल वाली समझ नहीं आई है। इसमें बच्चे को 23 और 24 भी समझ नहीं आया है, और 25 भी समझ नहीं आया है। क्योंकि 23 और 24 की समझ में ये भी शामिल है कि बीस और तीन तेईस होते हैं एवं बीस और चार चौबीस, तो 23 और 24 को जोड़ने पर 47-48 जैसी संख्या मिलेगी। और 25 व 25 जोड़कर 410 जैसी संख्या नहीं मिल सकती। बच्चों के साथ में ठीक से काम करना चाहते हैं तो हमको समझना पड़ेगा कि उनको वास्तव में समझ में कहाँ दिक़्क़तें आ रही हैं, सिर्फ़ रिवीज़न करवाने से बात ज़्यादा बनेगी नहीं। एक और सवाल आनन्द का है, उन्होंने कहा है कि सीखने का क्षेत्र व्यापक है तो क्या हम केवल पाठ्यक्रम-आधारित लर्निंग लॉस की बात कर रहे हैं? वो कह रहे हैं कि हमने विषयों के पाठ्यक्रम की बात की, पर साथ ही बच्चे स्कूल नहीं गए तो एक दूसरे से बातचीत करना, एक दूसरे के साथ खेलना और ऐसी अन्य स्थितियों के दौरान जो सीखना है वह भी नहीं हो पाया। शुरुआत में जगमोहनजी ने भी कहा था कि अकादमिक के साथ-साथ सामाजिक और मनोवैज्ञानिक लॉस भी हुआ है। इस वेबिनार के अन्त की ओर बढ़ रहे हैं तो मैं संक्षिप्त में कुछ जोड़ने के लिए आप सभी से आग्रह करती हूँ।

बच्चे भूल गए हैं। दो साल में अपने साथियों के साथ उनकी जो अन्तःक्रिया होती गणित की, भाषा और अन्य विषयों की कक्षा में, और अपने शिक्षक व साथियों के साथ उस अन्तःक्रिया के फलस्वरूप उनको किसी एक अवधारणा के बारे में व्यापक रूप से जो समझने को मिलता, वह उन्हें नहीं मिला है।

सुनील : बहुत महत्त्वपूर्ण सवाल है। महामारी के जो तमाम प्रभाव समाज पर पड़े उनसे बच्चे अछूते नहीं हैं। स्कूल में पढ़ने-लिखने, विषयों को सीखने-सिखाने पर कैसे काम होगा, यह महत्त्वपूर्ण है ही लेकिन साथ-साथ जो बच्चों के व्यक्तित्व के सामाजिक-मानसिक पहलू हैं उनको व पूरे परिदृश्य को समझते हुए बच्चों के साथ काम करने की ज़रूरत है। विद्यालय में ऐसा माहौल बनाने की ज़रूरत है कि सभी बच्चे एक दूसरे की कैसे मदद कर सकते हैं, शिक्षक किस तरह रिक्तताओं को पाटने का काम कर सकते हैं, समुदाय और विद्यालय के बीच रिश्ते को कैसे

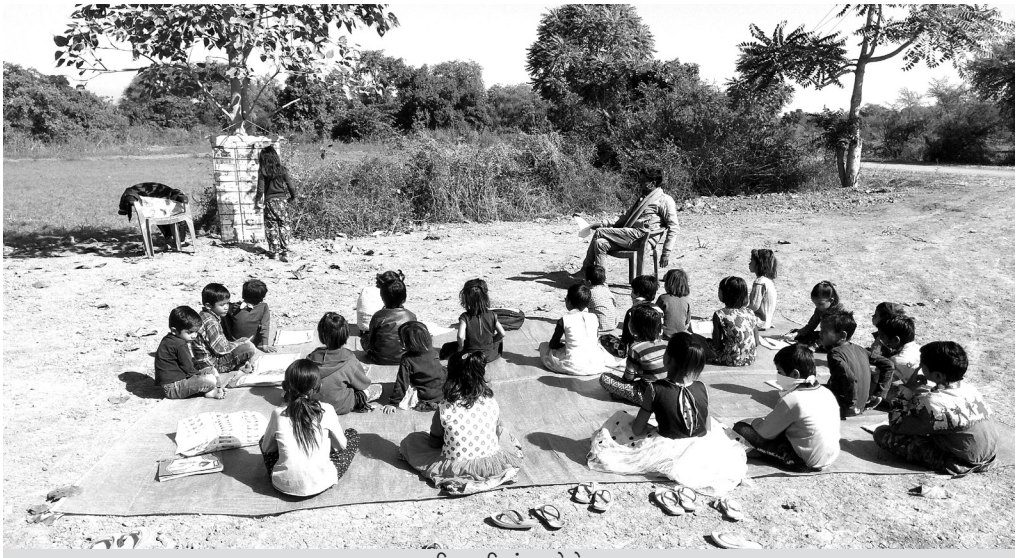

चित्र : हिमांशु खोले

गहरा कर सकते हैं, इन सब मुद्दों पर समेकित रूप से बात होनी चाहिए। इसीलिए लर्निंग लॉस की भरपाई का कोई शॉर्टकट नहीं हो सकता और दूसरा, इस रिकवरी का जो पूरा प्लान होना चाहिए वो बहुत ही कॉम्प्रिहेन्सिव होना चाहिए। कॉम्प्रिहेन्सिव का मतलब यह है कि हमें इसके पाठ्यक्रम स्तर पर भी काम करने की ज़रूरत है, और जो पेडागोजिकल अप्रोच हम लेना चाहते हैं उसके ऊपर भी काम करने की ज़रूरत है, जो हम असेसमेन्ट बच्चों का कर रहे हैं उस असेसमेन्ट को किस तरीक़े से व्यवस्थित करना है, किस तरीक़े से हम शिक्षक को फ़ीडबैक दें कि हम किस तरीक़े से बच्चों की बेहतरी के लिए आगे अपने काम को ले जा सकते हैं, तो एक पूरा कॉम्प्रिहेन्सिव प्लान बनाकर जब तक इसको एड्रेस नहीं करते तब तक मुझे लगता है कि हम लर्निंग लॉस की रिकवरी का कोई पक्ष छोड़ रहे होंगे। इसीलिए मुझे लगता है कि एक समग्र दृष्टि से इस बात को एड्रेस करने की ज़रूरत है।

रजनी : शुक्रिया सुनीलजी, और इसी के साथ आप सभी वक्ताओं और सभी दर्शकों का भी धन्यवाद।